त्याग - अध्यात्म की शक्ति

सबसे सूक्ष्म व आवश्यक त्याग मैं-पन का है। यह मैं-पन ही संघर्षों व टकराव का जन्मदाता है, यह ही व्यर्थ का कारण है।

भगवान से सम्मुख मिलकर, बार-बार उसकी छवि निहारकर, सम्मुख ज्ञान सुनकर और उसकी नजर से निहाल होकर अपने तन-मन-धन से अपना-पन निकालकर उसे सच्चे दिल से समर्पित करना ही त्याग है।

सब कुछ त्याग करके भी मैंने यह त्याग किया-यदि यह भावना मन में या मुख पर रहती है तो त्याग का फल समाप्त हो जाता है।

मान के लिए कार्य करना त्याग नहीं है

कई मनुष्य कोई भी कार्य इसलिए करते हैं कि उससे उन्हें मान मिलता है, चारों ओर उनका नाम फैल जाता है। जिससे उन्हें मान न मिलता हो उस कार्य को, हेय दृष्टि से निहारते हैं। मान की कामना से किये गये कार्य फलदायक नहीं होते, पुण्य जमा नहीं होता। कई ज्ञानी भाषण इसलिए करते हैं कि उन्हें मान मिलता है या उनका चहुँ ओर नाम हो जाता है। इससे साधक को एक बड़ी हानि यह होती है कि वह इस कार्य में आसक्त हो जाता है। उसे यदि भाषण करने का अवसर न मिले तो उसे उदासी घेर लेती है। कर्म से यह आसक्ति साधना में गिरावट लाती है। ऐसी सेवाओं से खुशी तो अवश्य मिलती है, परन्तु यदि केवल खुशी की कामना से ही वह सेवा की जाती है तो वह खुशी शाश्वत नहीं रहती। कोई व्यक्ति बड़ा सेवास्थान बनाने में यदि इसलिए धन का सहयोग करता है कि वह भी सबकी नज़रों में आ जाए, कोई व्यक्ति यदि बार-बार मंच पर इसलिए जाता है कि सब उसे महारथी समझें, तो वह महारथी तो समझा जाता है, परन्तु महान नहीं बनता। उसका धन का सहयोग अनेक आत्माओं का कल्याण तो करता है परन्तु उसका कल्याण नहीं होता, क्योंकि सहयोग का फल उसे केवल सम्मान के रूप में प्राप्त हो जाता है। मान प्राप्ति को लक्ष्य बनाना- यह ज्ञानियों का लक्षण नहीं, क्योंकि मान मिलने से ही मनुष्य बड़ा नहीं बन पाता। यदि मान ही चाहता हो तो उसे स्वमान से व महान स्थिति से प्राप्त करना चाहिए। ऐसा मान स्थायी होता है और दूसरों के लिए प्रेरणा बन जाता है। माँग कर प्राप्त किया गया मान रॉयल्टी भी नहीं है और ऐसा मान देह अभिमान को बढ़ाकर बार-बार अपमान की अनुभूति कराता है। मान तो हमे स्वयं भगवान ने दिया है। हम इतने महान बनते हैं, इष्ट देव बनते हैं जो हमें मान देने के लिए लाखों भक्त बेसब्री से इन्तज़ार करते हैं। यह है स्थिति द्वारा अधिकार से प्राप्त मान। बाकी सब मान टिमटिमाते दीपकों की तरह हैं जो कभी भी बुझ जाते हैं।

शान का जीवन योगियों का जीवन नहीं

सादगी को तिलांजली देकर शान से रहना, दिखावे से रहना, स्थिति के बजाय वस्त्रों पर व शारीरिक व्यक्तित्व पर ज्यादा ध्यान देना प्रभु-प्रेमी आत्माओं का लक्षण नहीं। विदित है कि इससे देह अभिमान बढ़ता है और रूहानियत की चमक समाप्त हो जाती है। हमारी सच्ची शान स्वमान और रूहानियत में है। हमारी ओर सारा विश्व तब आकर्षित होगा, जब हममें पवित्रता व रूहानियत का आकर्षण होगा। बाह्य शान सदा नहीं चलती। किसी ने ठीक ही कहा है- ''सादगी श्रृंगार हो गई, आईने की हार हो गई।'' क्या महान योगिनी दादी जानकी इसका प्रत्यक्ष उदाहरण नहीं हैं, जो असंख्य आत्माओं के आकर्षण का केन्द्र हैं।

हमारे पास अच्छे से अच्छा वाहन हो, मैं इससे बड़ा हूँ, मेरे पास इससे श्रेष्ठ साधन हो, मैं सेवा में बड़े पद पर हूँ, मेरे चश्मे का फ्रेम औरों से अच्छा व महंगा हो। जहाँ मैं बैठूँ, वहाँ अन्य कोई न बैठे। मैं दूसरों के साथ भोजन कैसे करूँ... यह शान की कामना मनुष्य को परेशान करने वाली है। जिनका ध्येय इस तरह का है, वे ऊँच विचारों की शान का अनुभव नहीं कर सकते। ऊँचे विचार तो उसकी ही शोभा बढ़ाते हैं जिनके जीवन में सादगी का रस हो। आजकल यह भी मान्यता है कि सीधे-साधे साधकों को पूछता ही कौन है? जिसका भभका ज्यादा, उसकी पूछ ज्यादा। परन्तु यह नहीं भूलना है कि अहंकार की पूँछ भी ज्यादा होती है जिसको फिर आग लगानी ही पड़ती है। यदि आप त्यागी हैं और कोई नहीं पूछता तो ज़रा इन्तज़ार करो, वह दिन दूर नहीं जबकि त्यागी व तपस्वी ही विश्व की स्टेज पर होंगे।

महत्व सेवा का नहीं, सेवा-भाव का है

जब सेवा, पद पोज़िशन से विकृत हो जाए तब सेवा संघर्ष बन जाती है। सेवा के क्षेत्र में आगे बढ़ना लोग इसे मान लेते हैं कि हम इन्चार्ज बन जाएँ। हमारे पास शक्ति हो, धन पर हमारा अधिकार हो, हमारी आज्ञा सर्वमान्य हो। परन्तु सत्य यह है कि सेवा के क्षेत्र में वही मनुष्य अग्रणी है जिसके चित्त में सेवाभाव, रहमभाव व क्षमाभाव आ गया है। सेवा से यदि अहंभाव में वृद्धि हुई है, सेवा से यदि टकराव में वृद्धि हुई है, सेवा से परेशानियों में वृद्धि हुई है तो उसे सेवा नहीं कहा जाएगा। सेवा आत्माओं की पालना का नाम है, सेवा दातापन है, सेवा करके लेने का भाव अलौकिक भाव नहीं है। तो सेवा ने यदि हमारी टोपी ऊँची कर दी हो, तो हम उसे नीचा कर दें। सेवा का प्रत्यक्ष फल खुशी का खजाना है। खुशी भी बाह्यमुखता की नहीं, सांसारिक नहीं, आंतरिक खुशी जिसकी चमक चेहरे से प्रतिभाषित हो। त्याग के बल से की गई सेवा प्रत्यक्ष फल देती है। इससे ज्ञान सुनने वालों में आत्म-जागृति आती है। ज्ञान सुनने वाले, हमें और हमारे त्याग को देखते हैं, तब ही वे तपस्या के मार्ग पर चलने का साहस करते हैं।

सेवा में सम्पूर्ण त्याग हो

सेवा के क्षेत्र में नम्बर तीन बातों के आधार पर मिलते हैं- 1. कितनों को सुख दिया 2. कितनों को योग्य व योगी बनाया। 3. स्वयं कितने शक्तिशाली बनकर रहे- सबसे सूक्ष्म व आवश्यक त्याग मैं-पन का है। यह मैं-पन ही संघर्षों व टकराव का जन्मदाता है, यह ही व्यर्थ का कारण है।

मैं-पन कैसे आता है?

पहले मुझे यह मिले, फिर मैं सेवा करूं, कोई चान्स नहीं दिया तो सहयोग नहीं, 'मैंने किया', यह सेवा मैं ही करूँगा, दूसरा हाथ नहीं लगा सकता... मेरी ड्यूटी में तुमने हस्तक्षेप क्यों किया... मेरे बिना पूछे तुमने अपनी मनमत से यह काम क्यों किया, मेरी मत ही श्रीमत है... मैं-पन की इन बातों को पहचानकर उनसे मुक्त होने के लिए जो उद्यत रहता है वही सेवा का सच्चा सुख लेने का अधिकारी है। सेवा यदि हमारी स्थिति को गिरा रही हो तो हमें त्याग की आवश्यकता है। जो सेवा में अथवा कर्म में न्यारा व प्यारा होकर के रहे, वही त्यागी है।

मैं-पन का स्वरूप अति सूक्ष्म होता है। मैने इतनी सेवा की, मुझे पूछा तक नहीं, मैं इतनी योग्य हूँ- मुझे कोई अवसर नहीं दिया जाता, मैं इनसे अच्छा भाषण कर सकती हूँ या मुरली सुना सकती हूँ, फिर भी इन्हें ही बार-बार अवसर मिलता है। इतना ही नहीं बल्कि कई तो वक्ता बनने पर, दूसरों को कुछ समझते ही नही, न दूसरों को आगे बढ़ने देते हैं- ये सब मैं-पन है जो व्यक्ति योग्य होते भी दूसरों के लिए भी अवसरों का त्याग कर दें, वही महान है और अवसर परछाई की तरह उसके पीछे-पीछे चलते हैं।

दूसरों को इसलिए दबाना कि कहीं मेरी सीट न चली जाए, इस डर से अवसर न देना कि फिर मुझे कोई नहीं पूछेगा, इनका ही सब पर प्रभाव छा जाएगा, इस प्रकार दूसरों की महानताओं व योग्यताओं को सम्मान न देना भी मैं-पन है। इससे पुण्य का सम्पूर्ण खाता क्षीण हो जाता है। समय आने पर मैं-पन युक्त आत्माएँ विघ्नों के अधीन हो जाती हैं और इस संसार में अपने को अकेला अनुभव करती हैं।

सच्चा त्यागी कौन

जो वस्तु मिलने पर, न मिलने पर, मान-अपमान, हार-जीत, निन्दा-स्तुति में समान रहे- वह महात्यागी है क्योंकि उसने निष्काम भाव से कर्म करना सीख लिया है और उसने सभी इच्छाओं का त्याग कर निमित्त भाव धारण कर लिया है। जो न्यारा होकर भौतिक पदार्थों का उपयोग करे, पदार्थ व साधन होने पर परेशान न हो, कार में यात्रा करने को मिले चाहे साइकिल पर दोनों में समभाव से रहे। चाहे 36 प्रकार के भोजन मिलें चाहे अचार-रोटी, दोनों में आनन्दित रहे, वही महात्यागी है। चाहे हज़ारों के मध्य भाषण करने को मिले, दोनों में समान भाव से सुखी हो, वही सच्चा त्यागी है। जो अच्छे कर्म करते हुए भी आसक्त न हो, वही त्यागी है। जो सब कर्मों में स्वार्थ भाव त्याग कर सेवा भाव से रत है, सच्चा त्यागी है।

तो अभी वसुन्धरा पर त्याग और वैराग्य की लहर फैलाएँ ताकि अनेक साधक ईश्वरीय मिलन से स्वयं को तृप्त कर सकें। त्याग करके भी जो त्याग का आन्तरिक सुख नहीं ले पा रहा है, उन्हें सही मार्गदर्शन मिले। त्याग करके अनेक महानात्माएं अपने जीवन को दिव्य बना सकें और इससे भी अधिक, हमारी सेवा का क्षेत्र विघ्नों से मुक्त, आत्मा को उड़ाने वाला बन जाए। हमारे पास हमारे लिए कुछ न हो, सब कुछ विश्व की सेवा के लिए हो। कितनी भाग्यवान हैं वे रूहें जिनका तन, मन व धन दूसरों को सुख देने में काम आ जाए। तो हम साधनों की दौड़ से बाहर जाएं तो अनुभूतियों की खान प्राप्त हो जाए।

-ब्र.कु.सूर्य

दिल्ली (मोहम्मदपुर)। प्रसिद्ध समाजसेवी डॉ.किरण बेदी को रक्षासूत्र बांधते हुए ब्र.कु.मीरा। साथ में है ब्र.कु.कविता।

बदायुं। डीआईजी आर.पी.सिंह को रक्षासूत्र बांधते हुए ब्र.कु.सरोज एवं ब्र.कु.करूणा।

सीतापुर। विधायक राधेश्याम जायसवाल को ओम शांति मीडिया भेंट करते हुए ब्र.कु.योगेश्वरी।

दिल्ली (माडल टाउन)। एस.पी.दीक्षित, निदेशक, उच्च शिक्षा दिल्ली को रक्षासूत्र बांधते हुए ब्र.कु.लता।

पारलाखमंडी। जिलाधीश जी.सी.पटनायक को रक्षासूत्र बांधते हुए ब्र.कु.राधा।

धुलिया-अशोक नगर। महानगरपालिका के महापौर मंजुल ताई गावित तथा डॉ.गावित को रक्षासूत्र बांधते ब्र.कु.प्रमिला व ब्र.कु.कमल।

सोनगढ़। जिला महिला मोर्चा प्रमुख सुमित्रा बहन तथा राजश्री को ईश्वरीय सौगात भेंट करते हुए ब्र.कु.सुभद्रा।